उपसंहार

भारतीय संगीत को सुरक्षित और समृद्ध बनाने में गायकवाड़ परीवार का योगदानः

बड़ौदा, जीसे वर्तमान समय में हम "कलानगरी" व "संस्कारी नगरी" के उपनाम से जानते व पहचानते है । देश में भारतीय संगीत के भविष्य को सुरक्षित एवं उज्जवल बनाने में बड़ौदा शहर का विशेष महत्व रहा है । इस महान योगदान के संदर्भ में चर्चा करते समय हमारें नजरों के समक्ष स्वाभाविक रुप से दो छबियाँ उपस्थित होती है; १.सयाजीराव गायकवाड तृतिय और २. उस्ताद मौलाबक्ष, इन दों महान विभूतियों ने अपने अथग परिश्रम एवं बौध्धिक व विचारशील साहसिक निर्णयों से न केवल बड़ौदा, किन्तु संपूर्ण भारत वर्ष के संगीत को एक नई दिशा प्रदान की ।

बड़ौदा में सांगीतिक वातावरण का निर्माण करने में सयाजीराव गायकवाड़ तृतिय के पूर्व शासकों जैसे कि सयाजीराव गायकवाड़ द्वितिय, खंडेराव गायकवाड़ और मल्हारराव गायकवाड़ का भी अभूतपूर्ण योगदान रहा है । इनके शासन काल में ही "कलावन्त कारखाने" का जन्म हुआ, जिसके अंतर्गत देश के प्रतिष्ठित गायक-वादक एवं नर्तकों को बड़ौदा में आमंत्रित किया जाता था । इन शासकों से पूर्व बड़ौदा में विशेष कर "रागदारी संगीत" या "शिष्ट संगीत" का विशेष अस्तित्व दृष्टिगोचर नहीं होता है ।

सयाजीराव गायकवाड़ तृतिय को उपरोक्त "कलावंत कारखाने"के स्वरुप में एक सांगीतिक विरासत अवश्य ही प्राप्त हुई । परंतु इस सांगीतिक विरासत का केवल स्वंय के लिए मनोरंजनार्थ प्रयोग न करके उसे अधिक समृद्ध-सृदढ़ और सुव्यवस्थित बनाने की दिशा में सयाजी राव तृतिय के शासन काल में सराहनीय कार्य किए गये ।

मौलाबक्ष को कलावंत खाते के अधिक्षक के रुप में नियुक्त करके मनमौज़ी कलाकारों कि गती-विधियों पर सुक्ष्म नजर रखी जाने लगी । कलाकारों को शिक्षित एवं क्रियाशिल रखने हेतु चार माह में एक बार लेखित एवं क्रियात्मक परिक्षाओं का आयोजन किया जाने लगा । कलाकारों की नियुक्ती, वेतन, पेन्शन, परिवहन, अवकाश इत्यादि संबधित नियमों कि रचना कि गई । कला प्रस्तुती का नियत समय पत्रक एवं नियुक्त अधिक्षक के पास अपनी दैनिक हाजरी दर्ज करवाने के लिए हाजरी पत्रक भी बनाया गया । इन सभी नियमों कि जानकारी देने हेतु सन् १८९९ में "कलावंत खात्याचे नियम" नामक पुस्तक को भी प्रकाशित किया गया। कलाकारों से इस पुस्तक में वर्णित नियमों के अनुसार ही कार्य करने का चुस्त आग्रह रखा गया। नियमों का पालन न करने वाले कलाकारों को दण्डित भी किया जाता था । साथ-साथ अपनी कला के स्तर को अधिक सुयोग्य बनाने हेतु कलाकरों को अग्रिम शिक्षा अर्जित करने के लिए प्रोत्साहित करके उन्हें आवश्यक आर्थिक सहाय भी प्रदान कि जाती थी ।

प्रजा वत्सल सयाजी राव गायकवाड़ ने संगीत को केवल दरबार की चौखट तक सिमीत न रखकर कलावंत खाते के सभी कलाकारों को प्रजा की सेवा में तत्पर रहने का आदेश दिया गया । सार्वजनिक उद्यानों, मुख्य मंदिरों, प्रमुख उत्सवों, शहर के मध्य में स्थापित मुख्य चार दरवाजें इत्यादि स्थलों पर कलावंत कारखाने के कलाकारों द्वारा नियत समय पत्रक के अनुसार विभिन्न प्रासंगिक संगीत की प्रस्तुतीयाँ दी जाती थी । जिससे बड़ौदा में सांगीतिक वातावरण की निर्मिती हुई और शहर की आम प्रजा को आसानी से विभिन्न प्रकार की संगीत प्रस्तुतीयों द्वारा स्वच्छ मनोरंजन प्राप्त हुआ । प्रजा रंजन के माध्यम से न केवल अच्छे श्रोताओं का निर्माण करना, परंतु संगीत के क्षेत्र में बड़ौदा में भी अच्छे कलाकारों की निर्मिती हो इस उद्देश्य से राज्य के विविध शहरों जैसे की बड़ौदा, पाटण, अमरेली, महेसाणा, डभोई और नवसारी में भी संगीत शालाएँ खोली गई ।

५८ वर्ष के अपने शासन काल के दरम्यान प्रजावत्सल महाराजा सयाजीराव गायकवाड़ ने लोकसंगीत, शास्त्रीय एवं पाश्चात्य संगीत, नृत्य, नाटक इत्यादि विभिन्न प्रकार के संगीत को प्रजा के मनोरंजनार्थ आयोजित करके बड़ौदा शहर में सांगीतिक वातावरण को स्थापित करने में अपना महत्व पूर्ण योगदान प्रदान किया ।

सन् १८९६ में मौलाबक्ष के निधन के बाद, उनके पुत्र मुर्तजाखान, अल्लाउद्दीन खान, जमाई रहमत खान तथा नाती इनायत खान ने गायनशाला को सूचारु रुप से आगे बढ़ाया किन्तु सन् १९१०-११ के बाद मौलाबक्ष के परिवारजनों का बड़ौदा छोड़कर विदेश कि ओर प्रयाण करने के बाद गायनशाला कि स्थिति दयनीय होती गई । योग्य प्रशासनिक संचालन के अभाव तथा दरबारी कलाकारों का मौलाबक्ष द्वारा प्रकाशित किये गए पाठ्यपुस्तकों के माध्यम से तथा सामूहिक शिक्षा पद्धति अनुसार कार्य करने में असंकुचितता इत्यादि कारणों से गायनशाला कि प्रचिति दिनों दिन कम होती गई व छात्रों कि संख्या में भारी गिरावट आने लगी ।

गायनशाला कि इस दयनीय परिस्थिति को देखते हुए महाराजा को संगीत के वर्तमान व भविष्य कि चिंता व्यथित करती रही । इस विपरित परिस्थिति में भी महाराजा ने गायनशाला को मृतःप्राय होने से बचाने के लिए हर संभव प्रयत्न व प्रयास किए । समय समय पर विभिन्न शास्त्रकारों संगीत विद्वानों को आमंत्रित करके विविध संमेलन, संगोष्ठीया आयोजित करके इस मृतःप्राय होती गायनशाला को पुनःजिवित करने का महत्वपूर्ण कार्य किया ।

अतः इस प्रथम प्रकरण का यह निष्कर्ष निकलता है कि युगद्रष्टा, प्रजावत्सल बड़ौदा नरेश सर सयाजीराव गायकवाड और दरबारी कलाकार उस्ताद मौलाबक्ष के संयुक्त प्रयत्नों एवं आधुनिक विचारों ने ही बड़ौदा को एक

“कलानगरी”के रुप में स्थापित करने में अपनी अहम् भुमिका प्रदान की । सयाजीराव गायकवाड़ के प्रपौत्र श्री फतेहसिंहराव गायकवाड़ के विचारोंनुसार “यदि भारत वर्ष के इन कला प्रेमी राजा महाराजाओं ने ही संगीत और उसकी साधना करने वाले कलाकारों को कई पिढ़ियों तक संरक्षण दिया और इस भारतीय संगीत कला को लुप्त होने से बचाने में अपना महत्वपूर्ण योगदान प्रदान किया” ।

मौलाबक्ष के सांगीतिक संस्कार एवं शिक्षा

मौलाबक्ष का जन्म एक सुखी, समृद्ध व संगीत प्रेमी ऐसे श्रीमंत परिवार में हुआ था । उनके दादाजी अनवर खान एक अच्छे गायक होने से उनके निवासस्थान पर विभिन्न कलाकारों का आना-जाना लगा रहता था, और सांगीतिक कार्यक्रमों का आयोजन भी किया जाता था । अतः बाल्यवस्था से ही मौलाबक्ष को संगीत के अच्छे संस्कार प्राप्त हुवे थे । ३ वर्ष की उम्र में ही माता-पिता के गुजर जाने से उनके चाचा इमाम खान द्वारा मौलाबक्ष का लालन-पालन हुआ । खेल कुद और पहलवानी के शौकीन मौलाबक्ष को एक फकीर के आशीर्वाद स्वरूप संगीत में रुचि उत्पन्न हुई । उनके नानाजी अनवरखान से उन्हें संगीत की प्रारंभिक तालीम प्राप्त हुई । इसीलिए कई इतिहासकारों ने मौलाबक्ष को “घरानेदार कलाकार” की श्रेणी में रखा है ।

नानाजी अनवर खान से प्रारंभिक संगीत शिक्षा अर्जित करने के बाद मौलाबक्ष बड़ौदा के ग्वालियर घराने के उस्ताद घसिट खान से काफि प्रभावित हुए और उनसे संगीत की अग्रीम तालीम अर्जित की । कठोर परिश्रम के फलस्वरुप अल्पसमय में ही मौलाबक्ष ने एक प्रतिष्ठित कलाकार के रुप में ख्याति अर्जित कर ली । उच्च कलाकार होने के बावजूद मौलाबक्ष ने संगीत सिखने की अपनी जिज्ञासावृत्ति में जीवनभर कमी न आने दी । उनके इसी स्वभाव के

परिणाम स्वरुप अपने मैसुर के प्रवास में वे कर्णाटक संगीत से बेहद प्रभावित हुवे और इस संगीत और उसके शास्त्र को सिखने की तीव्र जिज्ञासावृत्ति वश मौलाबक्ष ने दक्षिण के कई शहरों का प्रवास किया । अंत में तांजौर के प्रखर संगीतज्ञ सुब्रहमण्यम् अय्यर से दक्षीणी संगीत के शास्त्र और क्रियात्मक संगीत का ज्ञान प्राप्त कीया । मौलाबक्ष भारत के प्रथम मुस्लीम कलाकार माने जाते है, जिन्होंने कर्णाटकी संगीत में भी अपनी निपुणता हांसिल की थी । उत्तरी संगीत पद्धति के ध्रुपद गायन एवं रुद्रवीणा तथा दक्षीण के गायन एवं सरस्वती वीणा की प्रस्तुती में मौलाबक्ष प्रवीण हुवे थे । इन्हीं दो विभिन्न संगीत-शैलीयों के संमिश्रण से मौलाबक्ष की एक अलग शैली विकसित हुई थी । जो "मौलाबक्ष घराना" या "भिवानी घराने"के नामसे प्रचलित हुई और इस घरानें के अंतर्गत देश के कई शिष्यों ने शिक्षा अर्जित की और इस घराने को आगे बढ़ाया ।

मौलाबक्ष की संगीत यात्रा

मौलाबक्ष ने अपने यौवन काल में ही सांगीतिक ख्याति व लोकप्रियता हांसिल कर ली थी । जिसके कारण भारत वर्ष के विभिन्न राज्यों के राजा-महाराजाओं, संगीत-विद्वानों इत्यादि द्वारा आमंत्रित किया जाता था । मौलाबक्ष के जीवन का अभ्यास करने से हमें यह विदित होता है कि; उन्होंने अल्पसमय में ही लगभग संपूर्ण भारतवर्ष का परिभ्रमण कर लीया था। पंजाब, मैसूर, बड़ौदा, कोल्हापुर, रतलाम, ग्वालियर, जयपुर, बान्दा, काठियावाड़, कलकत्ता, दिल्ली, बम्बई, लखनौ, हैद्राबाद, तांजोर, मालाबार, त्रावणकोर, विदर्भ इत्यादि जगहों का परिभ्रमण करके मौलाबक्ष ने अपनी संगीत के जादू से संपूर्ण देशवासीयों का मन जीत लीया था।

अपने इस दिर्घ सांगीतिक प्रवास में मौलाबक्ष ने बहुत कुछ सीखा, जाना एवं अनुभव प्राप्त किया । जिसके फलस्वरुप उन्होंने भारतीय संगीत की दयनीय

स्थिती को सुधार कर उसे समाज में आदर-सम्मान प्राप्त करवाने का निश्चय कर लिया । इनमें से कुछ प्रमुख कार्य निम्न प्रकार से है ।

१. मैसुर की यात्रा में मौलाबक्ष दक्षीणी संगीत विद्या व शास्त्र का ज्ञान प्राप्त करने में जो संघर्ष करना पडा, वैसी कठीनाई आनेवाली पीढ़ी को न हो इस दृष्टिकोण से मौलाबक्ष ने “गायनशाला”की निर्मिती का दृढ़ निश्चय कर लिया । बिना किसी उँच-नीच, जात-भेद, संगीत जिज्ञासुओं को संगीत का ज्ञान मिलें इस प्रकार की शिक्षा-व्यवस्था का निर्माण करने का निश्चय मौलाबक्ष ने मैसुर में ही कर लिया था ।

२. सन् १८७० में अपने बड़ौदा के प्रवास में, मौलाबक्ष को यह प्रतित हुआ कि जीस प्रकार युरोपियन संगीत में “स्वरलिपि” द्वारा प्रस्तुतिकरण एवं शिक्षा कि व्यवस्था प्रचलित है, उसी तरह भारतीय संगीत के लिए उपयुक्त स्वदेशी “स्वरलिपि” का होना अत्यंत जरूरी है, इस उद्देश्य से मौलाबक्ष ने अपनी “स्वरलिपि” का आविष्कार किया और जिसके प्रचार-प्रसार के लिए “गायना-ब्धि-सेतु” नामक छह पन्नों का सांगीतिक मासिक का प्रकाशन किया ।

३. मौलाबक्ष कि विद्वता के कारण सन् १८७५ में टैगोर परिवार द्वारा मौलाबक्ष को कलकत्ता में आमंत्रित किया गया । कलकत्ता में आयोजित “हिन्दु मेलों” में क्षेत्र मोहन गोस्वामी, अेस.अेम.टागोर जैसे संगीत विद्वानों के साथ मिलकर भारतीय संगीत के शास्त्र, उसके संवर्धन, संगीत शिक्षा एवं आवश्यक “स्वरलिपि”के विषय में मौलाबक्ष ने अपने विचारों को भलिभाँति प्रगट किये। कलकत्ता में ही आयोजित एक सांगीतिक कार्यक्रम में मौलाबक्ष के शास्त्र एवं क्रियात्मक संगीत के प्रदर्शन से प्रभावित होकर

व्हाईस रॉय, लोर्ड नोर्थब्रुक द्वारा मौलाबक्ष को "प्रोफेसर ऑफ म्युजिक" की पदवी से सम्मानित किया गया था ।

४. मौलाबक्ष को अपने जीवन में कई प्रतिष्ठित राज्यों से आमंत्रण मिला, किन्तु हर जगह मौलाबक्ष को यह अनुभव हुआ कि संगीत को केवल मनोरंजन का हि साधन माना जाता है; अतः उसे एक "अभिजात कला"के रुप में प्रस्थापित करने हेतु मौलाबक्ष देश भर घुमते रहे और इस कला को समाज में सम्मान प्राप्त हो, इस दिशा में कार्यरत रहे । अंत में उनके जीवन का यह उद्‌देश्य या सपना बड़ौदा में पूर्ण हुआ । सन् १८८१ में बड़ौदा नरेश सर सयाजीराव गायकवाड़ तृतिय ने मौलाबक्ष को पुनः बड़ौदा आमंत्रित कीया और उनके संगीत सबंधित नये विचारों, प्रयोगों का स्वागत करते हुवे आर्थिक एवं मानसिक सभी प्रकार की सहायता एवं स्वतंत्रता प्रदान की । परिणामस्वरुप अपने जीवन के अंतिम १६ वर्ष बड़ौदा में रहकर मौलाबक्ष ने अपने हर सपने को साकार किया और भारतीय संगीत को समाज में आदर-सम्मान प्राप्त करवाया ।

गायनशाला

मौलाबक्ष के सबसे प्रमुख कार्यो में से एक था "गायनशाला" कि स्थापना । संगीत को राजाओं के दरबार, महलों के सिमित दायरे से बाहर निकालकर उसे आम जनता के सन्मुख रखने का श्रेय मौलाबक्ष को अवश्य ही जाता है । "गायनशाला" की स्थापना के माध्यम से मौलाबक्ष ने समाज को संगीत सीखने-जानने-परखने व सुनने का सुवर्ण अवसर प्रदान किया ।

१ फरवरी १८८६ में प्रायोगिक स्तर शुरु कि जानेवाली इस शाला का नाम "छोकराओं नी गायनशाला" यांनी "बालकों की गायनशाला "रखा गया। मौलाबक्ष का यह मानना था कि यदि भारतीय संगीत के भविष्य को सुनहरा व सुरक्षित

रखना है तो सबसे पहले देश के बालकों को संगीत-कला के विज्ञान से परिचित करवाना अतिआवश्यक है। गायनशाला में ५ वीं कक्षा तथा उससे उँचे स्तर के बालकों को गायनशाला में प्रवेश दिया जाता था । मौलाबक्ष की गायनशाला में ,बच्चों कि स्कुली शिक्षा में किसी भी तरह का विक्षेप न हो उसका पुरा ध्यान रखा जाता था । और इसीलिए गायनशाला का समय शाम को ६ से ८ बजे तक का रखा गया था। बालकों को संगीत के प्रति आकर्षण एवं रुचि को बढ़ाने के लिए शुरु मे संगीत शिक्षा मुफ्त में दि जाति थी । मौलाबक्ष की इस अदभुत संक्लपना को अच्छा प्रतिसाद मिला और दिनों-दिन गायनशाला मे छात्रो की संख्या मे निरंतर वृद्धी होने लगी ।

मौलाबक्ष द्वारा स्थापित इस गायनशाला के मुख्य सिद्धांत इस प्रकार से थे।

१. गायन का ज्ञान एक आभूषण के रुप में देना ।

२. लोगों में गायन के प्रति अभिरुचि पैदा करना ।

३. संगीत एवं उसके शास्त्रों को पुर्नरुजीवन के लिए प्रयास करना ।

उपर्युक्त तीनों सिद्धातों के द्वारा संगीत को समाज में लोकप्रिय बनाने में मौलाबक्ष सफल रहे और फलस्वरुप मौलाबक्ष को राज्य की ओर से गायनशाला को कायमी स्वरुप से चलाने की अनुमति प्रदान की गई । पिछले ३००-४०० वर्षो में गुजरात मे ऐसी कोई संगीत संस्था होने के कोई आधारभूत प्रमाण नही मिलते। अतः संगीत की शिक्षा के माध्यम से संगीत के जिर्णोध्धार कि परिकल्पना को साकार करके इस व्यवसायलक्षी गुजरात में राग-संगीत को प्रचलित करने का श्रेय मौलाबक्ष को हि दिया जाता है । बड़ौदा राज्य की १८८५-८६ के वर्षिक अहवाल में मौलाबक्ष की इस उपलब्धि को इस तरह दर्ज किया गया है।

" This interesting and novel institution on this side of the Bombay presidency was opened in February 1886, as an experimental measure, with a view to teach the science and art of music as an accomplishment to students of the 5th and higher vernacular standards.

Professor Maulabux, The well-known scientific native musician, was placed in charge of this school, and necessary musical instruments and other articles were supplied".

उल्लेखनीय है की उस समय यह प्रबल मान्यता थी की केवल घरानेदार तरिके से ही संगीत सीखा जा सकता है। परन्तु अपने अथग परिश्रम व संशोधन के पश्चात् मौलाबक्ष ने एक आधुनिक और वैज्ञानिक संगीत शिक्षा-व्यवस्था का आविष्कार किया और उसके माध्यम से बड़ौदा, काठियावाड़, कलकत्ता, बम्बई, विदर्भ में कई शिष्यों को संगीत मे प्रवीण बनाया। मौलाबक्ष का यह प्रयत्न काफी सफल रहा और फलस्वरुप देशभर में घरानेदार संगीत शिक्षा के विकल्प के रुप में संस्थागत व सामूहिक शिक्षा पद्धति का विकास त्वरित गति से होने लगा । अब संगीत सिखना आसान हो गया और इस तरह भारतीय संगीत का खूब प्रचार-प्रसार हुआ और भारतीय संगीत को राष्ट्रीय-आंतरराष्ट्रीय स्तर एक सम्मानजनक स्थान प्राप्त हुआ, जिसका श्रेय मौलाबक्ष को ही जाता है ।

१९ वी शताब्दी में देश भर में मौलाबक्ष के पूर्व और समकालीन कई संगीत विद्वानों, समाज सुधारकों द्वारा विभिन्न प्रांतों में संगीत शालाओं की स्थापना हो चुकी थी । किन्तु मौलाबक्ष की गायनशाला अन्य संगीत शालाओं की तुलना में कई अधिक आधुनिक और वैज्ञानिक थी । मौलाबक्ष समकालीन स्थापित संगीत शालाओं के विपरीत मौलाबक्ष की गायन शाला में सभी जाति, धर्म या संप्रदाय के लड़को और लड़कीयों को बिना किसी भेद-भाव के प्रवेश

दिया जाता था । स्वरलिपि आधारित सामूहिक शिक्षा प्रणाली, योजना बद्ध अभ्यासक्रम, ब्लैक बोर्ड-चोक का प्रयोग, अभ्यास लक्षी ग्रंथो का प्रकाशन, लेखित व क्रियात्मक परिक्षाए एवं मुल्यांकन पद्धति, संगीत विषय में डिप्लोमां की पदवी, छात्र वृत्ति, भारतीय एवं पाश्चात्य संगीत की शिक्षा, गायन के साथ साथ विविध वाद्यों की शिक्षा, नियत कक्ष, नियमित समय पत्रक और निष्णांत शिक्षक इत्यादि मौलाबक्ष के स्कुल की विशेषता हि मौलाबक्ष को भारतीय संगीत के लिए उपयुक्त गायनशाला का आविष्कर्ता माना जाता है । वर्तमान समय में संगीत कॉलेज, फॅकल्टी या निजी संस्थानों में इसी प्रकार संगीत शिक्षा दि जाती है । १३३ वर्ष पूर्व इस संकल्पना को अस्तित्व में लाने का श्रेय युगद्रष्टा मौलाबक्ष को ही जाता है ।

ग्रंथ-साहित्य

अभ्यास लक्षी ग्रंथ साहित्य का निर्माण करना यह भी मौलाबक्ष के महत्वपूर्ण कार्यो में से एक था । उन दिनों संगीत में बढ़ती हुई श्रृंगारीकता के परिणाम स्वरूप सभ्य समाज के लोग संगीत को सीखने समझने से परहेज करने लगे थे । संगीत के प्रति लोगों की इन भावनाओं बदलने हेतु मौलाबक्ष ने अपनी स्वरलिपि में अभ्यासलक्षी दर्जेदार ग्रंथ-साहित्य का निर्माण किया । गुजरात के प्रचलित संत कवियों नरसिंह महेता, प्रेमानंद, मिराबाई तथा शंकराचार्य, मन्नृसिंहाचार्य, सुन्दर, नानक इत्यादि के भजनों, पदों को आधार बनाकर विविध रागों में बंदिशो को निबद्ध किया गया । दुसरी महत्वपुर्ण बात यह थी की इन ग्रंथों की रचना बड़ौदा में बोली जानेवाली प्रादेशिक भाषाएँ जैसे की गुजराती, मराठी, हिन्दी में की गई थी। इस तरह देशी भाषाओं में संगीत की शिक्षा और उसमें भी संगीत के साथ आध्यात्म, भक्ती को जोडने से जन मानस पर इसकी गहरी असर हुई और परिणाम स्वरुप लोग संगीत सीखने के प्रति प्रेरित हुवे। ठीक

इसी तरह का प्रयास पं. विष्णु दिगंबर पलुस्कर जी द्वारा भी २० वीं शताब्दी में किया गया था ।

लगभग १३० वर्ष पूर्व निर्मित यह सांगीतिक ग्रंथ हमारे संगीत का भूतकाल व उस समय की सांगीतिक परिस्थितीयों एवं रागों के स्वरुप को प्रदर्शित करने व समझने में अपना महत्वपूर्ण योगदान रखते है । इन ग्रंथो का अभ्यास करने से यह मालूम होता है कि यह एक आदर्श व विभिन्न दृष्टिकोण से संपूर्ण सांगीतिक ग्रंथ थे, जिसमें विविध परिभाषाओं द्वारा शास्त्र को सहज व सरल भाषा में समझाया गया है । उसी प्रकार अन्य क्रमिक पुस्तकों में प्रचलित अप्रचलित राग, ताल, विभिन्न काल, गायन के प्रकारों इत्यादि को सरलता से समझाया गया है । संगीत सीखने वाले छात्रों में राष्ट्रभावना, संस्कार सिंचन कि भावना प्रगट करने के उद्देश्य से आध्यात्मिक व नितिबोधक उच्च साहित्य का चयन मौलाबक्ष द्वारा अपने ग्रंथों में किया गया है । मौलाबक्ष के यह ग्रंथ उन दिनों काफि प्रचलित रहे, और इन्हीं ग्रंथों के माध्यम से संगीत शिक्षा को एक नई दिशा प्राप्त हुई और संगीत के प्रति समाज में आदर-सम्मान कि भावना प्रगट हुई ।

महिला संगीत शिक्षा

सन् १८८६ में स्थापित की गई "बालक गायन शाला" की सफलता से प्रेरीत मौलाबक्ष ने यह महसुस किया कि इस पुरुष प्रधान समाज में महिलाओं को संगीत शिक्षा से दुर रखा जाता है । समाज में महिलाओं के लिए गायन, वादन या नृत्य कला सिखना, देखना और सुनना निम्न कक्षा का कार्य माना जाता था । संगीत का शोख रखने वाली महिलाओं को हीन भावना से देखा जाता था । मौलाबक्ष का मानना था कि समाज में यदि भारतीय संगीत को आदर भाव प्राप्त करवाना है तो सर्वप्रथम महिलाओं का संगीत के क्षेत्र में पदार्पण करवाना अति आवश्यक है । जिस प्रकार विदेशों में पुरुषों के साथ साथ महिलाओं का भी

संगीत में वर्चस्व है, उससे विपरित भारत में महिलाओं का संगीत के क्षेत्र में नहीवत स्थान है, जो मौलाबक्ष को उचित न लगा । मौलाबक्ष का मानना था कि घर में ही अधिक समय व्यतित करने वाली महिलाओं को संगीत कि शिक्षा देने से उसके संस्कार आसानी से घर घर पहुँचेंगे । इसी उद्‌देश्य से मौलाबक्ष द्वारा बड़ौदा कि दो मुख्य कन्या शालाएँ (१).मराठी कन्या शाला नं.१ और (२).गुजराती कन्या शाला नं.१ में संगीत के विशेष वर्ग खोले गए। महिलाओं द्वारा घर-घर गाये जाने वाले आध्यात्मिक एवं भक्ति रस प्रदान गीत भजन, लोक संगीत एवं स्कुलों में पढ़ाई जाने वाली निती बोधक कविताओं को आधार बनाकर सन् १८९१ में "बाला संगीत माला"नामक पुस्तकें प्रकाशित की गई। यह पुस्तकें गुजराती और मराठी भाषा में प्रकाशित की गई थी। सन् १९११ में मौलाबक्ष के नाती इनायत खा द्वारा भी मुस्लीम कन्याओं के लिए उर्दु में भी "बाला संगीत माला" पुस्तक को प्रकाशित किया गया था। स्कुली शिक्षा के साथ साथ संगीत विषय को उनके अभ्यासक्रमों में जोडकर छात्राओं को संगीत सिखाया जाता था। मौलाबक्ष के इन्हीं प्रयत्नों के फलस्वरूप महिलाओं को भी संगीत को जानने परखने का सुर्वण अवसर प्राप्त हुआ। और शनैः शनैः पुरुषों के साथ साथ महिलाओं को भी संगीत जगत में आदर सम्मान प्राप्त हुआ। बड़ौदा क उपरांत नवसारी, ड़भोई, पाटण और अमरेली में भी कन्याओं के लिए संगीत के वर्ग खोले गए। अतः वर्तमान परिपेक्ष्य में देखा जाए तो संगीत के क्षेत्र में महिलाओं ने भी अपना वर्चस्व स्थापित किया है उसमें मौलाबक्ष के प्रयत्नों का विशेष योगदान रहा है ।

स्वरलिपि

भारतीय संगीत के लिए उपयुक्त स्वदेशी स्वरलिपि का निर्माण करने की दृष्टि से १९ वीं शताब्दी में कई महानुभावों द्वारा अनेक प्रयत्न किये गये । उन दिनों पाश्चात्य संगीत के लिए प्रयुक्त कि जाने वाली स्टाफ नोटेशन से प्रेरणा लेकर कई विद्वानों ने अपनी अपनी स्वरलिपि को प्रस्थापित करने का प्रयत्न किया

था । स्वभाविक है कि १९ वीं शताब्दी में निर्मित बहुतायत स्वरलिपियों में पाश्चात्य स्टाफ नोटेशन का प्रभाव स्पष्ट रुप से दृष्टि गोचर होता है । मौलाबक्ष की स्वरलिपि भी पाश्चात्य स्टाफ नोटेशन से प्रेरित थी । इस स्वर लिपि में हमें उनके जीवन भर की शिक्षा एवं अनुभव के पुरे निचोड़ के दर्शन प्राप्त होते है । कर्णाटकी ताल-काल के चिन्ह्, सरगम, स्टाफ नोटेशन एवं खुद के आविष्कार किये गये चिहनो-संकेतो द्वारा मौलाबक्ष ने अपनी मौलिक स्वरलिपि को जन्म दिया और इसी स्वरलिपि में अभ्यास लक्षी ग्रंथों का प्रकाशन किया ।

उल्लेखनीय है की अन्य समकालीन स्वरलिपिकारों की तुलना में मौलाबक्ष की स्वरलिपि अधिक सुव्यवस्थित, सरल और समझने योग्य थी, इन्हीं कारणों से करीब ३०-४० वर्षो जितने विस्तृत समय तक मौलाबक्ष की स्वरलिपि का भारतीय संगीत शिक्षा में वर्चस्व बना रहा था । स्वरलिपि आधारित पुस्तकों के माध्यम से भारतीय संगीत की शिक्षा को आधुनिक एवं वैज्ञानिक बनाकर समाज में उसे प्रचलित करने का श्रेय उस्ताद मौलाबक्ष को ही दिया जाता है । समयांतर यह लोकप्रिय स्वरलिपि शनैः शनैः मृतः प्राय होकर लुप्त हो गई, जिसके कुछ प्रमुख कारणों में मौलाबक्ष के परिवार का सन् १९१० के बाद विदेश की ओर प्रयाण करना हो सकता है । दुसरा कारण उस्ताद मौलाबक्ष के ही शिष्यों या प्रतिस्पर्धीयों द्वारा मौलाबक्ष की ही मौलीक स्वरलिपि में सुक्ष्म परिवर्तन या छेड-छाड करके उसे अपने नाम से प्रचलित व प्रकाशित करके मौलाबक्ष की मुल स्वर लिपी को हानि पहुँचाई गई, जिससे इस स्वरलिपि के लोकप्रियता में कमी आने लगी । अन्य विचारानुसार २० वीं शताब्दी के प्रारंभ में पंडित विष्णु दिगंबर पलुस्कर और पं. विष्णु नारायण भातखंडे जी ने इसी दिशा में अपनी व्यक्तिगत स्वरलिपियों का निर्माण किया जो काफि प्रचलित हुई और भारतीय संगीत के लिए वैकल्पिक स्वरलिपियाँ प्राप्त हुई, जिससे मौलाबक्ष की स्वरलिपि संगीत जगत में से लुप्त होकर एक इतिहास बन गई ।

उस्ताद मौलाबक्ष की स्वरलिपि का गह़न अभ्यास व चिंतन मनन करने पर यह जरुर महसुस होता है की यह स्वरलिपि आधुनिक प्रचलित स्वरलिपियों से अधिक क्लिष्ट है। किन्तु जिस प्रकार आधुनिक विश्व संगीत में सबसे अधिक प्रचलित स्वरलिपि के रुप में स्टाफ नोटेशन सर्वथा संपूर्ण, मान्यता प्राप्त एवं लोकप्रिय स्वरलिपि है । और जिस तरह यह स्वरलिपि भी प्रारंभ में समझने एवं परखने के लिए काफि कठीण प्रतित होती है, ठीक उसी तरह मौलाबक्ष की स्वरलिपि भी प्रारंभ में क्लीष्ट मालुम होते हुए भी उसमें भारतीय संगीत के लिए प्रयुक्त होने वाले विभिन्न अलंकाऱों, गमक, काकु भेद इत्यादि सुक्ष्म भावों को प्रगट करने की अद्‌भुत क्षमता है।

वास्तव में मौलाबक्ष दक्षिण के कर्नाटक संगीत से अधिक प्रभावित हुए थे इसलिये उनका यह प्रयत्न रहा की बंदिशो को लोग वैसी ही गाये जैसे कि रचनाकार ने उसे बनाया है, इसलिये मौलाबक्ष ने हर एक छोटी से छोटी बातों पर ध्यान रखकर स्वरलिपि बनाई है । यह भाव कर्नाटक संगीत में दृष्टीगत होता है इसलिये वहॉं का संगीत सदियों से ज्यों का त्यों चला आ रहा है। अर्थात हमारे संगीत में उपज को ज्यादा महत्व दिया जाता है, इसके प्रयोग गायक बंदिशों में भी करने लगे जिससे बंदिश का रुप ही बदल जाता है । यह उपज कार्य की छूट कर्नाटक संगीत में नहीं है । इन उपरोक्त कर्नाटक संगीत का गुण मौलाबक्ष में था, इसलिये उन्होनें हर सूक्ष्म बातों को ध्यान में रखा तथा उसके चिहन बनाये इस कारण पद्‌धति में काफी विस्तृतपन है परन्तु आज यह पद्‌धति क्लीष्ट मानी जाती है क्योकि इसे समझाने तथा इसका ज्ञान रखने वाला कोई नहीं है ।

संगीत में शोध करने के इच्छुक छात्र-छात्राओं के लिये मौलाबक्ष की स्वरलिपि पद्‌धति अच्छा तथा काफी रोचक विषय है । इस विषय के शोध से बहुत महत्वपूर्ण तथ्य सामने आयेगें और स्वरलिपि के ज्ञान से मौलाबक्ष के इस कार्य का पुर्नउत्थान हो सकेगा ।

यह सही है कि आज मौलाबक्ष की स्वरलिपि प्रचार में नहीं है परन्तु आज संगीत में स्वरलिपि के उद्‌भव से जो लाभ प्राप्त हो रहे है उसका पूर्ण श्रेय खान साहब मौलाबक्ष को दिया जाना चाहिये । संगीत क्षेत्र में हुए कार्यो में स्वरलिपि पद्‌धति का गठन एक महत्वपूर्ण कार्य है । उस्ताद मौलाबक्ष के द्वारा यह कार्य बड़ौदा में संभव हुआ । इस नवीन पहल ने संगीत जगत में चार चांद लगा दिये तथा संगीत का क्षेत्र व्यापक हुआ । लोगों की विचार शक्ति को उजागर करने में स्वरलिपि पद्‌धति ने विशेष भूमिका निभायी । विशेष बात तो यह है कि संगीत के कलापक्ष (प्रयोग) का लेखन शुरु हुआ । जिससे अनेक शंकाओं का समाधान हुआ तथा रचनाओं की सुरक्षा का साधन प्राप्त हो सका ।

एक नयी चेतना का उदय हुआ । शिक्षण में अनेक परिवर्तन दृष्टिगत हुए । समूह में शिक्षा प्रदान करने के चलन को बल मिला । समाज में संगीत मुट्‌ठी भर लोगों के हाथ में था । स्वरलिपि से अब इसके प्रेमियों की संख्या बढ़ने लगी थी क्योंकि स्वरलिपि से बंदिशों का लिखित रुप प्राप्त हुआ जो संगीत जिज्ञासुओं के लिए एक वरदान साबित हुआ । इस तरह उसे कम समय में अच्छा रियाज़ कर के समाज में प्रतिष्ठित स्थान प्राप्त हो सका । घरानों के आपस में जो विवाद उत्पन्न होते थे उसे भी स्वरलिपि पद्‌धति से समाप्त किया । इस प्रकार संगीत में स्वरलिपि पद्‌धति का विशेष स्थान है । उन्हीं के कर कमलों से इस दिशा की समझ लोगों में आयी । प्रोफेसर स्वरलिपि के जनक के रुप में हमेशा याद किये जायेगें । इस कार्य के लिए सम्पूर्ण संगीत प्रेमी आपका आभारी रहेगा । अतः वर्तमान समय में भी संगीत शिक्षा जगत में इस स्वरलिपि के प्रयोग से उसे जीवन दान मिल सकता है, एवं आधुनिक प्रचलित दो स्वरलिपियों के विकल्प में मौलाबक्ष की स्वरलिपि को भी संगीत शिक्षा-जगत में समाविष्ट किया जा सकता है ।

बहुमुखी मौलाबक्ष ने संगीत के हरएक क्षेत्र में अपनी बहुमूल्य सांगीतिक सेवाएँ प्रदान कर भारतीय संगीत को सर्वोच्च शिखर पर बिराजमान करने में अपना महत्वपूर्ण योगदान दिया है । संगीत जगत में बहुमूल्य सांगीतिक सेवाएँ प्रदान करने वाले मौलाबक्ष को कई विशेष उपनामों से भी जाना जाता है ।

दरबार में "कलावन्त कारखाने" के प्रशासनिक व्यवस्थापक के रुप में "सुपरिटेनडन्ट मौलाबक्ष", भारतीय संगीत के शास्त्र निपुण और उत्तम संगीत-शिक्षक के रुप में "प्रोफेसर मौलाबक्ष", उत्तम रचनाकार के रुप में "बिथोवन ऑफ इण्डियन म्यूज़िक", गायनशाला के संचालक रुप में "प्रिन्सीपाल मौलाबक्ष", सिध्दहस्त गायक एवं वादक के रुप में "उस्ताद मौलाबक्ष" या "संगीत रत्न मौलाबक्ष", "ऑलराउन्ड म्युझीशियन", "आधुनिक तानसेन" तथा समाज में संगीत और उसकी शिक्षा व्यवस्था को प्रचलित बनानेवाले मौलाबक्ष को "संगीत अवतार","नीवँ का पत्थर" जैसी उपाधियों से भी सम्मानित किया गया है ।

मौलाबक्ष के इन्ही सामाजीक, प्रशासनिक सांगीतिक कार्यो के फलस्वरूप वर्तमान समय में हमारी भारतीय संगीत संस्कृती जिवित, सुरक्षित व लोक प्रियता के शिखर पर बिराजमान है ।